**ओ३म्**

**‘मनुष्यों का धर्म सत्याचार है जो सबका एक ही है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

धर्म शब्द का वास्वविक अभिप्राय क्या है? धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है। इसकी परिभाषा है कि जो वस्तु जिन गुण व गुणों को धारण करती है वह उसका धर्म कहलाता है। अग्नि रूप, दाह, ताप, प्रकाश आदि को धारण करती है तथा सदैव ऊपर की ओर ही गति करती है। यह सब अग्नि के गुण व धर्म कहलाते हैं। इसी प्रकार से वायु, पृथिवी, आकाश, जल आदि के गुण हैं। मनुष्य को किसे व क्या-क्या धारण करना चाहिये? संसार में सत्य व असत्य दो प्रकार के गुण हैं। मनुष्यों द्वारा सत्य भी बोला जाता है और असत्य भी। दोनों परस्पर विरोधी गुण हैं। अब इनमें से किसको धर्म व किसको अधर्म माना जाये? संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो यह चाहता हो कि दूसरे लोग उसके साथ असत्य का व्यवहार करें। सभी मनुष्य यह चाहते हैं कि उनके साथ दूसरे लोग सदैव सत्य का ही व्यवहार करें। सत्य उसे कहते हैं कि जो पदार्थ जैसा है उसका वैसा ही वर्णन करना। उसके विपरीत यदि वर्णन किया जाये तो वह सत्य न होकर असत्य कहलाता है। अग्नि में जलाने का गुण होता है। यदि कोई यह कहे कि अग्नि जलाता नहीं है तो यह असत्य होगा। यदि कहें कि अग्नि में दाह वा जलाने का गुण होता है तो यह सत्य माना जायेगा। इसी प्रकार से सत्य व्यवहार वा सत्याचरण धर्म व इसके विपरीत असत्य का व्यवयहार अधर्म व असत्य कहलाता है। अब यह विचार करें कि सत्य क्या किसी स्थान विशेष के लोगों का गुण हैं या यह सार्वभौमिक सभी मनुष्यों का गुण है। भारत के लोग सत्य बोलें तो धर्म और इसी प्रकार से अन्य देश के लोगों पर भी यह लागू होता है। संसार में सभी स्थानों वा देशों में सत्य व्यवहार ही मान्य है। इससे यह ज्ञात होता है कि सत्य बोलना व व्यवहार में सत्य का पालन व आचरण ही उचित व मान्य है। अतः सत्य धर्म का आवश्यक व प्रमुख अंग सिद्ध होता है। सत्य बोलना न हिन्दू धर्म, न ईसाई और न मुस्लिम धर्म अपितु यह सर्वमान्य व सार्वभौमिक अर्थात् संसार के सभी लोगों का धर्म है। इसे सत्य धर्म या मानव धर्म कह सकते हैं। संसार का कोई भी व्यक्ति सत्य इस लिए नहीं बोलता कि वह हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम व सिख आदि मत का अनुयायी है अपितु सत्य सार्वभौमिक धर्म होने से ही सर्वत्र सभी लोगों द्वारा इसका व्यवहार अनादि काल से किया जा रहा है।

धर्म का एक मुख्य व्यवहार ईश्वर की मनुष्यों पर अनेक कृपाओं के कारण सभी मनुष्यों द्वारा उन कृपाओं के लिए उसका धन्यवाद करना व कृतज्ञ होना है। इसके लिए उपासना पद्धति की आवश्यकता होती है। उपासना के लिए हमें ईश्वर व अपनी आत्मा का स्वरूप निर्धारित करना व जानना भी आवश्यक है। ईश्वर व जीवात्मा का सत्य स्वरूप वैदिक मत में ही पाया जाता है। जिन दिनों वेदेतर मत व सम्प्रदाय अस्तित्व में आये, उन दिनों उन स्थानों पर अविद्या के कारण ईश्वर व जीवात्मा का स्वरूप किसी को विदित नहीं था। यदि होता तो फिर उनके बारे में पृथक, पृथक अपूर्ण व परस्पर विरोधी भी जानकारी प्रचलित व प्रसारित न होती। ईश्वर का स्वरूप कैसा है? इसका निर्धारण इस प्रकार कर सकते हैं कि जिसने इस संसार को बनाया है, इसे चला रहा है, जिसने इसे धारण व वश में कर रखा है तथा जो इसकी अवधि पूरी होने पर इसका प्रलय वा संहार करता है, उस सत्ता को ईश्वर कहते हैं। हम समझते हैं कि ईश्वर की इस परिभाषा से किसी को आपत्ति नहीं हो सकती। अब यदि ईश्वर सृष्टिकर्ता है तो स्वाभाविक रूप से वह चेतन सत्ता होने के साथ निराकार, सर्वव्यापक, सूक्ष्मातिसूक्ष्म, सर्वशक्तिमान, आनन्दस्वरूप, जन्म व मरण से रहित अर्थात् अनादि, अजन्मा, अमर वा अविनाशी भी होगा। ईश्वर का धार्मिक अर्थात् दयालु, पक्षपातरहित, न्यायकारी, जीवात्मा को मनुष्य आदि योनियों में जन्म देने वाला, सभी कर्मों का साक्षी तथा कर्मफल प्रदाता होना भी आवश्यक है। इससे मिलते जुलते तथा अविरोधी सभी गुण ईश्वर के ज्ञात व सिद्ध होते हैं। इस ब्रह्माण्ड की विशालता को देखकर ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ, अनादि, नित्य, अमर व अनन्त सिद्ध होता है। अब जीवात्मा की चर्चा करते हैं। मनुष्य व इतर सभी प्राणियों का अध्ययन करने पर सब प्राणियों के शरीरों में विद्यमान जीवात्मा सत्य, चित्त, सुख का आंकाक्षी, दुःख व दुःख के साधनों के प्रति उपेक्षा वा द्वेष भाव रखने वाला, अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम, अनादि, नित्य, कर्म फलों में फंसा हुआ तथा ईश्वर व माता-पिता द्वारा कर्म फलों के अनुसार मनुष्यादि अनेकानेक योनियों में जन्म लेने वाला सिद्ध होता है। मनुष्यों का धर्म क्या है, चिन्तन व विचार करने पर यह सिद्ध होता है कि ईश्वर व जीवात्मा को जानना, सही उपासना विधि, जो कि योगाभ्यास विधि ही है, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करना तथा सभी मनुष्यों व अन्य योनियों के प्राणियों के प्रति दया, प्रेम, स्नेह, सहयोग आदि का व्यवहार करना ही मनुष्यों का धर्म सिद्ध होता है। क्या मनुष्य के पास कोई आदर्श आचार संहिता व धर्म अधर्म विषयक कोई ज्ञान उपलब्ध है, तो इसका विचार करने पर ‘‘वेद” ही वह ज्ञान सिद्ध होता है जो सभी मनुष्यों के लिए आचरणीय व पालनीय है। इस मान्यता के अनेक कारण हैं। यह मान्यता अन्य सभी मान्यताओं में सर्वाधिक निर्दोष एवं तर्क एवं युक्तियों से सिद्ध है। इसको जानने व समझने के लिए ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों का अध्ययन व ज्ञान आवश्यक है।

संसार में जो भी मनुष्य व महापुरुष उत्पन्न हुए व होते हैं, वह सब अल्पज्ञ होते हैं। वेदाध्ययन व योग साधना से मनुष्य अपने ज्ञान में वृद्धि कर योगी, मनीषी, ऋषि व महर्षि आदि के पदों पर आसीन हो सकते हैं। जो मनुष्य योगी नहीं होगा और वेदों का सच्चा व यथार्थ ज्ञानी नहीं होगा, वह अवश्य भ्रमित होगा, निर्भ्रान्त कदापि नहीं हो सकता। यही कारण है कि हमें मत-मतान्तरों के ग्रन्थों में अज्ञान, परस्पर विरोधी बातें व विज्ञान विरुद्ध मान्यतायें प्राप्त होती हैं। सभी मत प्रायः एक दूसरे के विरुद्ध हैं जबकि एक ईश्वर और सब मनुष्यों का एक उद्देश्य एवं लक्ष्य होने के कारण उनका एक ही धर्म होना युक्तिसंगत सिद्ध होता है। अतः सभी मतों की शिक्षायें भी एक समान व अविरोधी होनी चाहिये। इनमें समानता न होना ही मत प्रवर्तकों की अल्पज्ञता व अविद्या को प्रस्तुत करता है। महर्षि दयानन्द ने इसका दिग्दर्शन अपने बनाये सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के ग्यारह, बारह, तेरह व चौदहवें समुल्लासों में कराया है। इसके साथ ही महर्षि दयानन्द ने इस ग्रन्थ के अन्त में स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश के अन्तर्गत वैदिक सिद्धान्तों व मान्यताओं को प्रस्तुत भी किया है। यह स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश ही वस्तुतः सभी मनुष्यों का सच्चा व एकमात्र सार्वभौमिक धर्म है। हम यह भी स्पष्ट कर दें कि पशु हिंसा व मांसाहार धर्म न होकर धर्म के विपरीत अधर्म वा पाप कर्म है जो ईश्वरीय व्यवस्था से दण्डनीय होता है। पशु हिंसा करना ईश्वर के काम में बाधा उत्पन्न करना है। बाधा इस प्रकार कि परमात्मा ने पशु व पक्षियों आदि को मनुष्यों की भांति ही उनके पूर्व जन्मों के पाप कर्मों के फल भोगने के लिए उत्पन्न किया है। मनुष्य इन पशुओं की हिंसा कर व मांसाहार कर ईश्वर के काम में बाधक बनते हैं, अतः ईश्वरीय व्यवस्था में बाधा उत्पन्न करने का दण्ड तो ऐसे लोगों को मिलेगा ही। ईश्वर ने वेदों में यजमान के पशुओं की रक्षा करने का विधान किया है और इनकी हिंसा के लिए कठोर दण्ड का विधान भी किया है। हम अनुमान करते हैं कि राम, कृष्ण, युधिष्ठिर आदि वैदिक राजाओं के काल में पशुओं की हिंसा करने वालों को वेदानुसार कठोर दण्ड दिया जाता रहा होगा। परमात्मा ने मनुष्यों के भोजन के लिए अनेकानेक शाकाहारी स्वादिष्ट बल व शक्तिवर्धक पदार्थ बनायें हैं। उन्हीं का भक्षण कर सभी मनुष्यों को सन्तुष्ट रहना चाहिये। मांसाहार करना ऐसा है जैसे स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना। ईश्वर ने जीव कर्म करने में स्वतन्त्र और फल भोगने में परतन्त्र बनाया है। इसी कारण ईश्वर प्रेरणा तो सभी को करता है परन्तु रोकता किसी को नहीं है। संसार में जो दुःखी मनुष्य व इतर प्राणी देखे जाते हैं, वह इस बात का प्रमाण है कि यह अपने पूर्व जन्म व इस जन्म के बुरे कर्मों के कारण दुःखी है।

धर्म एक ही है, इसका यह प्रमाण भी है कि ईश्वर ने केवल एक वैदिक धर्म ही उत्पन्न किया था। सृष्टि के आरम्भ से महाभारतकाल के 1.96 अरब वर्षों तक संसार में एक वैदिक ही विद्यमान रहा। कारय यह था कि सभी ऋषि-मुनि विद्वान थे, अतः असत्य मत अस्तित्व में नहीं आ सकते थे। वेदेतर सभी मत व सम्प्रदाय मताचार्यों द्वारा मध्यकाल के अज्ञानता के युग में अपने अल्पज्ञान से बनाये हैं, इसी कारण उसमें अज्ञानता तथा मनुष्य के हित व अहित की बातें विद्यमान हैं। वेद ही एक मात्र ऐसे ग्रन्थ हैं जो ज्ञान व विज्ञान दोनों दृष्टियों से पूर्णतः निर्दोष हैं। इस कारण एकमात्र वेदधर्म ही सभी मनुष्यों का धर्म सिद्ध होता है। लेख समाप्ति पर यह भी उल्लेख कर दें कि मनुष्य जीवन का उद्देश्य अभ्युदय एवं निःश्रेयस की प्राप्ति है। अभ्युदय सांसारिक उन्नति को कहते हैं जैसा कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र, योगेश्वर श्री कृष्ण व महर्षि दयानन्द जी सहित ऋषियों का यश (अभ्युदय) विद्यमान है। निःश्रेयस मोक्ष जन्म व मरण से 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों के लिए अवकाश को कहते हैं। इस अवधि में जीवात्मा दुःखों से सर्वथा पृथक रहकर ईश्वर के सान्निध्य में रहते हुए सुख की चरमावस्था आनन्द का भोग करता है। मनुष्य जो भी अच्छे व बुरे कर्म करता है वह अपने जीवन व अपने प्रिय कुटुम्बियों व मित्रों को सुखी बनाने के लिए करता है। इस काम में वह भूल जाता है कि सुख प्राप्ति के लिए वह जो अशुद्ध व भ्रष्ट आचरण का सहारा लेता है वह ईश्वरीय व्यवस्था में दण्डनीय है। अविद्या से ग्रस्त नास्तिक लोग ही अशुभ कर्म कर पाप के बन्धन में फंसते हैं। अतः दुःखों से सर्वथा मुक्त होने का सत्य मार्ग केवल वैदिक धर्म की शरण में आने पर ही मिल सकता है। वेदों का अध्ययन व उसकी शिक्षाओं का आचरण ही संसार के सभी मनुष्यों का साझा धर्म है। विवेक बुद्धि से इसे समझने का प्रयत्न करना चाहिये। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः 9412985121**

**ओ३म्**

**“ऋषिभक्त कीर्तिशेष प्रसिद्ध वैदिक विद्वान आचार्य पं. राजवीर शास्त्री**

 **व उनका एक दुर्लभ चित्र”**

आज सितम्बर, 2006 के चित्रों की एलबम देखते हुए हमें उसमें प्रसिद्ध वैदिक विद्वान आचार्य पं. राजवीर शास्त्री जी का एक चित्र मिला जो हमने अपने साधारण से कैमरे से खींचा था। चित्र में आचार्य राजवीर जी गुरुकुल पौंधा, देहरादून के एक ब्रह्मचारी को पढ़ा रहे हैं। हमें स्मरण है कि जब हमने यह दृश्य देखा था तो कैमरा पास में होने के कारण हमने उस चित्र को कैपचर कर लिया था। पं. राजवीर शास्त्री जी निर्लोभी एवं दानी प्रकृति के देवतुल्य मानव व सच्चे व श्रेष्ठ आचरण वाले विद्वान थे। आपने गुरुकुल देहरादून एवं गुरुकुल गौतम नगर, दिल्ली के ब्रह्मचारियों को पढ़ाकर सच्चा आर्य होने का परिचय दिया।

आप जीवन भर आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, ऋषि भक्त लाला दीपचन्द आर्य, आर्य विद्वान व नेता श्री धर्मपाल आर्य आदि से भी जुड़े रहे। आप इस ट्रस्ट की प्रसिद्ध पत्रिका के सम्पादक भी रहे और इसके साथ आपने जीवन में अनेक विषयों के अनेक ग्रन्थों का सम्पादन व प्रणयन किया। दयानन्द सन्देश ने समय समय पर अनेक विषयों के अनेक विशेषांक प्रकाशित किये। इनकी सूची बहुत लम्बी है। **वैदिक मनोविज्ञान विशेषांक, सृष्टि संवत् विशेषांक, जीवात्म-ज्योति विशेषांक, शरीर में जीवात्मा का स्थान आदि आपके कुछ प्रसिद्ध विशेषांक एवं ग्रन्थ है।** वैदिक कोष का भी आपने प्रणयन किया। योग दर्शन के प्रसिद्ध व्यास भाष्य की हिन्दी टीका कर आपने आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट की ओर से उसका प्रकाशन कराया था। विशुद्ध मनुस्मृति एवं उपनिषद भाष्य ग्रन्थ का सम्पादन व भाष्य आदि कार्य भी आपने किये। महर्षि दयानन्द ने वेद भाष्य से इतर अपने ग्रन्था में जिन वेद मन्त्रों के अर्थ दिये थे उनका संकलन कर सम्पादन भी आपने किया और उसका प्रकाशन भी आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट की ओर **‘महर्षि दयानन्द वेदार्थ प्रकाश’** नाम से हुआ। पं. विशुद्धानन्द शास्त्री जी के तीन खण्डों वाले विशालकाय ग्रन्थ **‘वेदार्थ कल्पदु्रम’** के अन्तिम दो खण्डों के सम्पादक भी आप ही रहे। हमारा सौभाग्य है कि हम लगभग आरम्भ काल से ही दयानन्द सन्देश से जुड़े रहे और इस पत्रिका में प्रकाशित होने वाले आपके सभी लेखों को पढ़ते थे और समय समय पर अपने विचार भी सम्पादक महोदय को भेजते रहते थे। इसी कारण हमारा पं. राजवीर शास्त्री जी से परिचय हो गया था। इस पत्रिका से हमारा प्रेम बढ़ता ही रहा। आज भी हमारे पास इसके पुराने व नये अंक उपलब्ध हैं। जब कभी इन पत्रिकाओं की जिल्दों को खोलते व पढ़ते है ंतो प्रसन्नता व सन्तोष होता है।

देहरादून के गुरुकुल में हमने अनेक बार वेदारम्भ एवं उपनयन संस्कारों व वेद पारायण यज्ञों के ब्रह्मा के रूप में भी आपको देखा है। अनेक बार गुरुकुल को जो बड़ी धनराशियां दान में प्राप्त हुईं, उनमें भी पं. राजवीर शास्त्री का नाम देखकर हमें प्रसन्नता व गौरव होता था। आज के धनी आर्य विद्वानों को आचार्य राजवीर शास्त्री के जीवन व कार्यों को प्रेरणा लेनी चाहिये।

हम आशा करते हैं कि आचार्य जी के शिष्य व भक्त इस चित्र को पसन्द करेंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः 9412985121**